 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2653833

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

गांधी दर्शन के आलोक में प्रेमचन्द और उनका उपन्यास साहित्य : तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. उर्मिला पोरवाल
हिन्दी विभागाध्यक्ष
शेषाद्रिपुरम महा.बैंगलोर
सम्पादक मण्डल सदस्य गृंथालयाः

मुख्य शब्द – गांधी दर्शन, प्रेमचन्द

Cite This Article: डॉ. उर्मिला पोरवाल. (2019). "गांधी दर्शन के आलोक में प्रेमचन्द और उनका उपन्यास साहित्य : तुलनात्मक अध्ययन." *International Journal of Research - Granthaalayah,* 7(4), 171-177. https://doi.org/10.5281/zenodo.2653833.

'दे दी हमें आजादी बिना खडग बिना ढाल,
साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल'

ये लोकप्रिय पंक्तियां बापू के करिश्माई व्यक्तित्व और कृतित्व का प्रशस्ति-गान हैं। महात्मा गांधी ने किसी नए दर्शन की रचना नहीं की है वरन् उनके विचारों का जो दार्शनिक आधार है, वही गांधी दर्शन है। गांधी-दर्शन के चार आधारभूत सिद्धांत हैं- सत्य, अहिंसा, प्रेम और सद्भाव।

वह बचपन में 'सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र' नाटक देखकर सत्यावलंबी बने। उनका विश्वास था कि सत्य ही परमेश्वर है। उन्होंने सत्य की आराधना को भक्ति माना और अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के प्रयोग' रखा। 'मुंडकोपनिषद' से लिए गए राष्ट्रीय वाक्य 'सत्यमेव जयते' के प्रेरणा-श्रोत बापू हैं। बापू सत्य और अहिंसा के पुजारी थे। उनका विचार था, 'अहिंसा के बिना सत्य की खोज असंभव है। अहिंसा साधन है और सत्य साध्य।' शांति प्रेमी रूस के टॉलस्टाय और अमेरिका के हेनरी डेविड थॉरो उनके आदर्श थे।

ईश्वर की सत्ता में विश्वास करनेवाले भारतीय आस्तिक के ऊपर जिस प्रकार के दार्शनिक संस्कार अपनी छाप डालते हैं वैसी ही छाप गांधी जी के विचारों पर पड़ी हुई है। वे भारत के मूलभूत कुछ दार्शनिक तत्वों में अपनी आस्था प्रकट करके अग्रसर होते हैं और उसी से उनकी सारी विचारधारा प्रवाहित होती है।

किसी गंभीर रहस्यवाद में न पड़कर वे यह मान लेते हैं कि शिवमय, सत्यमय और चिन्मय ईश्वर सृष्टि का मूल है और उसने सृष्टि की रचना किसी प्रयोजन से की है। वे ऐसे देश में पैदा हुए जिसने चैतन्य आत्मा की अक्षुण और अमर सत्ता स्वीकार की है। वे उस देश में पैदा हुए जिसमें जीवन, जगत सृष्टि और प्रकृति के मूल में एकमात्र अविनश्वर चेतन का दर्शन किया गया है और सारी सृष्टि की प्रक्रिया को भी सप्रयोजन स्वीकार किया गया है।
यद्यपि उन्होंने इस प्रकार के दर्शन की कोई व्याख्या अथवा उसकी गूढ़ता के विषय में कहीं विशद और व्यवस्थित रूप से कुछ लिखा नहीं है, पर उनके विचारों का अध्ययन करने पर उनकी उपर्युक्त दृष्टि का आभास मिलता है। उनका वह प्रसिद्ध वाक्य है-- जिस प्रकार मैं किसी स्थूल पदार्थ को अपने सामने देखता हूँ उसी प्रकार मुझे जगत के मूल में राम के दर्शन होते हैं। एक बार उन्होंने कहा था, अंधकार में प्रकाश की और मृत्यु में जीवन की अक्षय सत्ता प्रतिष्ठित है।

यहाँ उन्हें जीवन और जगत का प्रयोजन दिखाई देता है। वे कहते हैं कि जीवन का निर्माण और जगत की रचना शुभ और अशुभ जड़ और चेतन को लेकर हुई है। इस रचना का प्रयोजन यह है कि असत्य पर सत्य की और अशुभ पर शुभ की विजय हो। वे यह मानते हैं कि जगत का दिखाई देनेवाला भौतिक अंश जितना सत्य है उतना ही और उससे भी अधिक सत्य न दिखाई देनेवाला एक चेतन भावलोक है जिसकी व्यंजना जीवन है।

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2653833

फलतः वे यह विश्वास करते हैं कि मनुष्य में जहाँ अशुभ वृत्तियाँ हैं वहीं उसके हृदय में शुभ का निवास है। यदि उसमें पशुता है तो देवत्व भी प्रतिष्ठित है। सृष्टि का प्रयोजन यह है कि उसमें देवत्व का प्रबोधन हो और पशुता प्रताड़ित हो, शुभांश जागृत हो और अशुभ का पराभव हो। उनकी दृष्टि में जो कुछ अशुभ है, असुंदर है, अशिव है, असत्य है, वह सब अनैतिक है। जो शुभ है, जो सत्य है, जो शुभ्र है वह नैतिक है।

इसी के प्रकाश में महात्मा गांधी ने सारी सृष्टि के विकास और मानव के इतिहास को देखा। उनका दर्शन एक प्रकार से जीवन, मानव समाज और जगत का नैतिक भाष्य है। इसी की गर्भ दृष्टि से उनकी अहिंसा का प्रादुर्भाव हुआ है। अहिंसा का अर्थ है-मन, वाणी अथवा कर्म से किसी को आहत न करना। ईर्ष्या-द्वेष अथवा किसी का बुरा चाहना वैचारिक हिंसा है तथा परनिंदा, झूठ बोलना, अपशब्दों का प्रयोग एवं निष्प्रयोजन वाद-विवाद वाचिक हिंसा के अंतर्गत आते हैं। उनकी अहिंसा प्राचीन काल से संतों और महात्माओं की अहिंसा मात्र नहीं है। उनकी अहिंसा शब्दप्रतीक रूप में उच्चरित होती है जिसमें उनकी सारी दृष्टि भरी हुई है। वह मानते हैं कि जगत में जो कुछ अनैतिक है वह सब हिंसा है। उनकी अहिंसा केवल जीव हिंसा न करने तक ही परिमित नहीं है, प्रत्युत जहाँ कहीं हिंसा हो, अन्याय हो, पशुता हो, उसका मुकाबला करने के लिए परमाशक्ति के रूप में अग्रसर होती हैं। वह कायर पलायनवादी अथवा शस्त्र से भयभीत होनेवाले के लिए निकल भागने का मार्ग प्रस्तुत करने के निमित्त नहीं आयोजित होती। वह वीरता, दृढ़ता, संकल्प और धैर्य को आधार बनाकर खड़ी होती है जो अन्याय और अनाचार को, जगत की सारी शस्त्रशक्ति को और द्वेष तथा दंभ से अधीर हुई शासनयत्ता की सारी दमनात्मक प्रवृत्ति को चुनौती देती है।

उनकी इस चिंतनधारा से असहयोग और सत्यागह का जन्म हुआ। यही उनकी हिंसक क्रांति, रक्तहीन विप्लव और हिंसाहीन युद्ध का मूर्त रूप है। उनकी दृष्टि में अहिंसा अमोघ शक्ति है जिसका पराभव कभी हो नहीं सकता। सशस्त्र विद्रोह से कहीं अधिक शक्ति अहिंसक विद्रोह में है। इस अहिंसक पथ को प्रदर्शित करके वे कल्पना करते हैं एक ऐसे लक्ष्य तक पहुँचने की जहाँ अहिंसा के आधार पर ही मनुष्य के जीवन, उसके समाज और उसके जगत की व्यवस्था की रचना की जा सके। वे मानते हैं कि व्यक्ति से समाज बनता है और व्यक्ति का परिवर्तन समाज को परिवर्तित कर देगा। वे यह स्वीकार करते हैं कि आर्थिक व्यवस्था का व्यक्ति और समाज पर सबसे अधिक प्रभाव होता है और फिर उससे उत्पन्न हुई आर्थिक और सामाजिक मान्यताएँ राजनीतिक व्यवस्था को जन्म देती हैं। फलत: समाज के बहुत बड़े अंग का शोषण, दोहन और दलन। इस प्रकार अधिकारवंचित और शोषित जनसमाज आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से मूलतः पराधीन होता है यद्यपि देखने में स्वाधीन दिखाई देता है।

गांधी जी में युग युग से मनुष्यता के विकास द्वारा प्रदर्शित आदर्शों का प्रादुर्भाव समवेत रूप में ही दिखाई देता है, उनमें भगवान राम की मर्यादा श्रीकृष्ण की अनासक्ति, बुद्ध की करुणा, ईसा का प्रेम एक साथ ही समाविष्ट दिखाई देते हैं। ऊँ चे ऊँचे आदर्शों पर, धर्म और नैतिकता पर, प्राणिमात्र के कल्याण की भावना पर जीवनोत्सर्ग करनेवाले महापुरु षों की समस्त उच्चता निहित दिखाई देती हैं।

गांधी जी की तरह मुंशी प्रेमचंद्र ने भी लड़ी हैं लड़ाइयां, जहां गांधीजी सत्याग्रह के माध्यम से लड़े वहीं मुंशी प्रेमचंद भी समाजिक कुरीतियों के खिलाफ पहले से ही अपनी लेखनी से लड़ाई लड़ रहे थे। गांधी जी की क्रियात्मकता की झलक हमें प्रेमचंद्र के प्रारम्भिक साहित्य में ही मिलने लगती है फिर चाहे बात देशप्रेम की हो या फिर सामाजिक कुरीतियों कीI

बीसवीं सदी का वह भारत, जिसकी सोई हुई आस्था जागने के लिये अकुलाने लगी थी...उसमें एक नाम साहित्य की दुनिया से था तो दूसरा राजनीतिक हलचलों से, वे नाम थे...प्रेमचंद और महात्मा गांधी।

देश के और सामाजिक कुरीतियों के प्रति दोनों महापुरुषों की चिंता समान थी। एक ने उसका प्रतिकार अपनी लेखनी से किया तो दूसरे ने सत्याग्रह से।

यहां प्रारम्भ में ही यह बात विचारणीय है कि क्या प्रेमचंद गांधीजी से प्रभावित थे? निस्संदेह इसमें दो मत नहीं हैं कि प्रेमचंद पर गांधी जी का प्रभाव था पर यह भी निर्विवाद सत्य है कि गांधी की लड़ाई जिन-जिन समस्याओं के विरुद्ध रही, उस लड़ाई को प्रेमचंद पहले से ही लड़ रहे थे या यूं कहें कि हम प्रेमचंद के विचारों में, उनके साहित्य में गांधी के आगमन से ही गांधी दर्शन की छाया पाने लगते हैं। गांधी की क्रियात्मकता की झलक हमें प्रेमचंद के प्रारम्भिक साहित्य में ही मिलने लगती है...चाहे वह देश प्रेम की बात हो या सामाजिक समस्याओं की।

इसका कारण स्पष्ट है, वह यह कि गांधीजी का भारत प्रेमचंद के लिये उनका अपना घर था जिसमें उनका बचपन अठखेलियों की यादों को संजोये हुये बड़ा हुआ था, जिसकी झलक हमें उनकी कहानी "चोरी" में मिलती है, कुछ इस तरह-"हाय बचपन, तेरी याद नहीं भूलती। वह कच्चा, टूटा घर, वह पुआल का बिछौना, नंगे बदन, नंगे पांव खेतों में घूमना, आम के पेड़ों पर चढ़नाकृसारी बातें आंखों के सामने फिर रही हैं...गरम पनुए रस में जो मजा था, वह अब गुलाब के शर्बत में भी नहीं, चबेने और कच्चे बेरों में जो रस था, वह अब अंगूर और खीरमोहन में भी नहीं मिलता।..."

उनके हृदय में समाई इसी प्रकार की भावात्मकता प्रेमचंद को उद्वेलित करती रही अपनी लेखनी में, जिसमें देश के लिये उनकी तड़प है और प्रेम भी है। इसीलिये वे अपने देश में पनपी तमाम बुराइयों के विरोध में अपनी लेखनी चलाते हैं जिसके स्वर हमें गांधी दर्शन में मिलते हैं।

भारतीय राजनीति में गांधीजी का आगमन 1916 के आस-पास हुआ पर प्रेमचंद के साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ लगभग 1901 से ही हो चुका था। स्वाभाविक था कि ऐसे प्रेमचंद के लिये तत्कालीन परिस्थितियां अत्यंत प्रभावित कर देने वाली थीं जिनमें राष्ट्रीय चेतना और राजनीतिक संघर्ष का बिगुल बज चुका था। देश की उन परिस्थितियों ने प्रेमचंद की लेखनी को जैसे धार दे दी और वे चल पड़े उन्हीं रास्तों पर, जिन पर आगे गांधी जी को आना था।

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2653833

अमृतराय के इस कथन से इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है जिसमें वे लिखते हैं..."सन् 1901 के आसपास प्रेमचंद ने अपना पहला उपन्यास "श्यामा" लिखा। मुझे बताया गया है कि उसमें प्रेमचंद ने बड़े सतेज, साहसपूर्ण स्वर में ब्रिटिश कुशासन की निंदा की है।"

यही भावधारा उस काल की कहानियों में मिलती है। इन कहानियों का संग्रह, संभवतः 1906 में "सोजेवतन" के नाम से छपा था। यह किताब फौरन जब्त कर ली गई... देश की परिस्थितियां ही ऐसी थीं कि हर सच्चे भारतीय के सीने में देश प्रेम उफान मार रहा था। "सोजेवतन" संग्रह की पहली कहानी "दुनिया का सबसे अनमोल रतन" में उसी की परिणति दिखती है जिसमें उस प्रेमिका के द्वारा मंगाई गई रत्नजड़ित मंजूषा में से निकली तख्ती पर सुनहरे अक्षरों में लिखा है... "खून का वह आखिरी कतरा जो वतन की हिफाजत में गिरे, दुनिया की सबसे अनमोल चीज है...।" इस संग्रह की पांचों कहानियों में देश प्रेम की ही महिमा है। "यही मेरा वतन है" कहानी में अपने बच्चों के साथ अमेरिका में बस जाने वाले एक भारतीय के सीने में अपने देश के प्रति प्रेम का दर्द कुछ इसी तरह बोलता है।

प्रेमचंद की वैचारिक चेतना के इसी क्रम में 1912 में "वरदान" उपन्यास आता है जिसमें बड़े-बड़े जनांदोलनों का रूप पहली बार दिखाई देता है। उपन्यास का प्रारंभ ही देश सेवा की अभिलाषा के साथ उसी के लिये वरदान मांगने से होता है। प्रेम कथा के ताने-बाने में बुनी इस रचना का अंत भी देश सेवा के ही संकल्प से होता है।

उन दिनों देश में स्वतंत्रता आंदोलन के साथ ही सामाजिक सुधार के भी आंदोलन चल रहे थे। प्रेमचंद का "प्रेमा" अथवा "प्रतिज्ञा" उपन्यास उसी का प्रतिफल था जिसमें उपन्यास का विधुर नायक अमृतराय वैधव्य के भंवर में पड़ी हुई अबलाओं के साथ अपने कर्तव्य का पालन करने के लिये आर्य मंदिर में प्रतिज्ञा करता है।

प्रेमचंद देश में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों से अत्यधिक आहत थे। अछूतोद्धार और विधवा विवाह की समस्या पर उनकी लेखनी आहत होकर चली है। यह उनकी कथनी और करनी की समानता ही थी कि उन्होंने स्वयं 1905 में एक बाल विधवा शिवरानी देवी से विवाह किया। 1907 का यह उपन्यास गांधी के आने से पूर्व का है, जिसमें उठाई गई समस्याओं को आगे चलकर गांधीजी ने अपने समाज सुधार का प्रमुख अभियान बनाया।

प्रेमचंद ने "प्रतिज्ञा" उपन्यास भारतीय समाज की सबसे पीड़ित विधवा नारी की समस्या को लेकर लिखा है जिसमें वे इस सामाजिक समस्या को सुधारवादी ढंग से सुलझाने की कोशिश करते हैं।

यहां यह बताना महत्वपूर्ण है कि प्रेमचंद की इस समाज सुधारक कृति में गांधीवादी विचारधारा क्यों दिखाई देती है, वह इसलिये कि महात्मा गांधी केवल राजनीतिक आंदोलनकारी ही नहीं थे बल्कि एक समाज सुधारक भी थे, जिनका मानना था कि राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने के लिये देश की सामाजिक बुराइयों से मुक्ति जरूरी है।

प्रेमचंद की इसी सामाजिक चिंता के क्रम में उनका उपन्यास "सेवासदन" आता है जो 1918 में प्रकाशित हुआ। भारतीय राजनीति का यह वह समय था जब गांधीजी भारत की राजनीति के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन कर रहे थे। ऐसे समय में प्रेमचंद का यह उपन्यास नारी समस्या को लेकर आया। प्रेमचंद की बहुत बड़ी विशेषता है कि वे यथार्थ का चित्रण तो करते हैं पर उसकी परिणति आदर्श में होती है। पर वे अपने आदर्शवादी रूप में भी सामाजिक यथार्थ को छूटने नहीं देते। उनका यही रूप "सेवासदन" में उनके आदर्श की स्पष्ट छाप छोड़ता है जिसमें वे गणिका हो चली सुमन को दालमंडी के कोठे से निकाल कर सेवासदन की अध्यक्षा बना देते हैं। एक समाज सुधारक के रूप में महात्मा गांधी ने भी इस समस्या को एक प्रमुख सामाजिक समस्या के रूप में देखा था जिसे वे अनैतिक और पशुवृत्ति जैसा मानते थे। प्रेमचंद भी इस उपन्यास में यही भाव लेकर चले हैं।

बिहार के चंपारण में हजारों भूमिहीन मजदूर और गरीब किसान अंग्रेजों के शोषण से खाद्यान्न के बजाय नील और अन्य नकदी फसलों की खेती करने को मजबूर थे। किसानों पर होने वाले इस तरह के अत्याचार के विरोध में गांधीजी द्वारा 1917 में चंपारण का पहला सफल सत्याग्रह किया गया जिसके बाद उनकी समस्या दूर होने के साथ ही वे अपनी जमीन के मालिक बन सके। इसी के बाद इसी तरह की समस्याओं से त्रस्त भारत के किसानों में एक संगठनात्मक चेतना का विकास होने लगा था। ऐसे समय में प्रेमचंद की किसानी चेतना इन हलचलों के साहित्यिक आंदोलन के लिये उठ खड़ी हुई और उन्हीं कृषक समस्याओं का सच लिये 1922 में उनका उपन्यास आया..."प्रेमाश्रम"। गांधीजी का चंपारण सत्याग्रह, असहयोग आंदोलन, जिसने भारतीय जनमानस में अत्याचार का विरोध करने की शक्ति भर दी थी, जिसके कारण समाज में एक जाग्रति का उदय हो चला था ये सब "प्रेमाश्रम" के प्रेरणास्रोत बने। स्वयं प्रेमचंद इस प्रेरणा को स्वीकार करते हुये अपनी पत्नी शिवरानी देवी से कहते हैं...""गांधीजी राजनीति के माध्यम से भारत के किसानों और मजदूरों के सुख-चैन के लिये जो प्रयत्न कर रहे हैं, "प्रेमाश्रम" उन्हीं प्रयत्नों का साहित्यिक रूपांतर है। ("प्रेमचंद घर में") प्रेमचंद ने किसानों के सारे दर्द की अनुभति कर ली थी तभी तो वे ऐसे पहले लेखक हुए, जिन्होंने भारत में जमींदारी उन्मूलन की बात कही।

1925 में आया प्रेमचंद का उपन्यास "रंगभूमि", जो राजनीतिक मंच पर गांधीवाद के चरमोत्कर्ष का काल था। यह वह समय था जब गांधीजी असहयोग आंदोलन को स्थगित कर सविनय अवज्ञा आंदोलन की तैयारी में संघर्षरत थे। उनका "यह" उपन्यास गांधीजी के इसी सत्याग्रही आत्मबल से प्रेरित है जिसमें इसका मुख्य पात्र, अंधे भिखारी सूरदास का आत्मबल, पशुबल के विरुद्ध लड़ते दिखाई देता है। सूरदास बनारस के पाण्डेयपुर गांव का निवासी है जिसके पास पूर्वजों से मिली उसकी कुछ जमीन है जिसे वह अपने जीवनयापन के लिये इस्तेमाल न कर गांव के पशुओं को चरने के लिये छोड़ देता है। उसका ऐसा त्याग कि वह भीख मांग कर अपना जीवन व्यतीत करता है।

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2653833

पूंजीपति जनसेवक उसकी जमीन पर सिगरेट का कारखाना लगाने के लिये उसे अच्छे दाम देकर इस जमीन को खरीदना चाहता है पर सूरदास इससे साफ इनकार कर देता है। वह जमीन खरीदने के तमाम प्रलोभनों से भी विचलित नहीं होता और अपने आदर्शों की रक्षा के लिये सत्याग्रह करते हुए अपने को होम कर देता है। उपन्यास की मुख्य समस्या औद्योगिकीकरण के कारण होने वाली समस्या है जिससे गांधीजी भी चिंतित थे, जिसके मूल में पूंजीपतियों के निजी लाभ और बाकी सब शोषण ही शोषण था। सच्चाई की यही लड़ाई सूरदास अकेले बंद आंखों और खुले दिल से लड़ता रहा। "रंगभूमि" में महत्व इस बात का नहीं है कि सूरदास एक हारी हुई लड़ाई लड़ता है बल्कि महत्व इस बात का है कि वह अन्याय को चुपचाप सहन नहीं करता, बल्कि लड़ता है।

निश्चित रूप से लेखक का आदर्श उसके उसी संघर्षमूलक आत्मबल में ध्वनित होता है जिसमें उनका पात्र हार नहीं मानता, पलायन नहीं करता बल्कि विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए शहीद हो जाता है जो उनके यथार्थ में भी आदर्श बनता है। अगर "प्रेमाश्रम" में प्रेमचंद प्रेमशंकर बनकर गांधी के सत्याग्रह की लड़ाई लड़ते हैं तो रंगभूमि में सूरदास के रूप में गांधी को ही उतार देते हैं। यही वह उपन्यास था जिसने अपनी प्रसिद्धि के चलते प्रेमचंद को कथा सम्राट की पदवी दे डाली।

आगे जैसे-जैसे अंग्रेजी हुकूमत के विरोध में गांधीजी का संघर्ष तेज होता गया, प्रेमचंद के उपन्यासों में भी उस विरोध के स्वर तेज होते गए। 1932 में आया उनका "कर्मभूमि" उपन्यास गांधीजी के स्वाधीनता और अछूतोद्धार आन्दोलन की कर्मभूमि का ही साहित्यिक रूप था। उपन्यास का नायक अमरकान्त बनारस के सेठ समरकान्त का बेटा है जो शुद्ध खद्दरधारी, चरखा चलाने वाला समाजसेवी है। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने क्रान्ति का व्यापक चित्रण करते हुए तत्कालीन सभी राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं को कथानक से जोड़ा है।

प्रेमचंद स्वाधीनता आंदोलन में कलम के सिपाही ही नहीं थे बल्कि अपने पारिवारिक जीवन के साथ उसमें सक्रिय भूमिका भी निभा रहे थे, जिसमें उनकी अर्द्धांगिनी शिवरानी देवी को एक क्रांतिकारी के रूप में दो महीने का कारावास भी हुआ। प्रेमचंद जेल जाने को स्वयं उत्सुक थे, पर उनकी देश प्रेम की भावना में पत्नी भी साथ खड़ी हो गई। "प्रेमचंद घर में"...जीवनी से शिवरानी देवी की एक सक्रिय क्रांतिकारी की भूमिका का पता चलता है। प्रेमचंद के मुंशी दयानारायण निगम को 7 जून, 1930 को लिखे पत्र से यह बात स्पष्ट होती है कि आंदोलन में जेल जाने के लिये वे पूरी तरह तैयार थे लेकिन उनकी पत्नी ने इस इच्छा को पूरा नहीं होने दिया। कारण स्पष्ट था-पत्नी की स्वयं जेल जाने की इच्छा।

इसी समय आया प्रेमचंद का "समर यात्रा" कहानी संग्रह गांधीजी के सविनय अवज्ञा आंदोलन पर जोर देता है पर "सोजेवतन" की तरह सरकार ने इसे भी जब्त कर लिया। इसके अलावा उनकी कहानियों में भी गांधी के आंदोलन की स्पष्ट छाप मिलती है जिसमें मुख्य रूप से "जुलूस", "शराब की दुकान", "लाल फीता", "अनुभव", "मैकू", "होली का उपहार", "आहुति", "जेल" और "पत्नी से पति" आदि कहानियों में गांधीजी के आंदोलनों की स्पष्ट गूंज है। 8 फरवरी, 1921 को गांधीजी ने गोरखपुर में एक विराट जनसभा में अंग्रेजी हुकूमत के विरुद्ध अपना ओजस्वी भाषण दिया था। उस भाषण का प्रेमचंद पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने 15 फरवरी को ही अपनी सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया।

एक तरफ गांधीजी का भारत तो दूसरी तरफ उसी भारत के ग्रामीण जीवन में जीने वाला प्रेमचंद का नायक नहीं बल्कि महानायक-उनका गरीब किसान जो ग्रामीण जीवन के महाकाव्य में अपने जीवन संघर्ष का नायक होकर उभरता है...जैसे लगता है, वही पूरा भारत है जिसका शताब्दियों तक शोषण और उत्पीड़न हुआ है, वह "गोदान" का होरी ही है। वह अपने कर्तव्य को समर्पित निष्ठावान है, सहता है, मरता है पर हार नहीं मानता। 1936 में आये "गोदान" को देखकर ऐसा लगता है कि प्रेमचंद की सारी उपन्यास यात्रा का अंत "गोदान" में ही होना था।

इस उपन्यास तक आते-आते प्रेमचंद गांधीजी से भी आगे निकल जाते हैं। उन्हें लगता है कि हम लोगों के द्वारा लड़ी जाने वाली वह कैसी आजादी की लड़ाई है जहां इस कृषक देश में किसान की ऐसी हालत है कि वह ऋण के मकड़जाल में फंसकर विवश अपने परिवार की एक-एक इच्छा के लिये छटपटाता है और हल त्याग कर फावड़ा उठाने को मजबूर हो जाता है। उनके अंदर की चिंता कहती है, क्या इसका कोई हल है अपने भारत में? इसीलिये शायद अभी तक होने वाले उनके यथार्थ चित्रण में आदर्श की कोई जगह नहीं बची थी, तभी तो वह किसान से मजदूर बन फावड़ा चलाते-चलाते अंत में दम तोड़ देता है। उनकी यही मूल चिंता है भारत के किसान को लेकर, जो "गोदान" में एक किसान की किसान से मजदूर बनने की कहानी कहती है और जो कई प्रश्नों को छोड़कर समाप्त हो जाती है। प्रेमचंद ऐसे भारत के स्वप्नद्रष्टा नहीं थे, उनकी उसी चिंता की परिणति "गोदान" में अपने तमाम प्रश्नों के साथ हुई है।

प्रेमचंद का आजादी पाने जा रहे भारत को लेकर एक सपना था, जिसमें था अब तक की लड़ी गई उनकी सारी सामाजिक और राजनीतिक लड़ाई से मुक्त एक भारत। "हंस" के अपने प्रथम संपादकीय में उनके विचार उनकी इसी कामना की तरफ संकेत करते हैं..."हंस के लिये यह परम सौभाग्य की बात है कि उसका जन्म ऐसे शुभ अवसर पर हुआ है, जब भारत में एक नये युग का आगमन हो रहा है, जब भारत पराधीनता की बेड़ियों से निकलने के लिये तड़पने लगा है... हमारा यह धर्म है कि उस दिन को जल्द से जल्द लाने के लिये तपस्या करते रहें।...हंस का ध्येय आजादी की जंग में योग देना है।" बनारसी दास चतुर्वेदी को लिखे अपने एक पत्र में वे कहते हैं... "इस समय तो सबसे बड़ी आकांक्षा यही है कि हम स्वराज्य-संग्राम में विजयी हों।"...

स्वतंत्रता आंदोलन को निर्ममता से कुचलने के सरकार के रवैये पर वे विक्षुब्ध होकर मुंशी दयानारायण निगम को लिखते हैं..."गवर्मेंट की ज्यादतियां नाकाबिले-बर्दाश्त हो रही हैं।...उसके बाद मई 1930 "हंस" के अंक में वे सरकार को चेतावनी भी दे देते हैं..."संगीन से तुम चाहे जो काम ले लो, पर उस पर बैठ नहीं सकते।"...

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2653833

इस प्रकार हम देखते हैं कि “सोजेवतन” से प्रारंभ हुई प्रेमचंद की स्वाधीनता लड़ाई समान गांधीधर्मी होते हुये समर-यात्रा तक चलती रहती है जिसमें आजादी की फिक्र के साथ ही साथ सामाजिक कुरीतियों की भी चिंता दिखाई पड़ती है। निश्चित रूप से उनकी कलम देश की आजादी के लिये मजदूरों, शोषितों और किसानों के लिए एक फावड़े की तरह औजार की तरह चलते दिखाई देती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बींसवीं सदी में दो ही पुरुष हुए भारत की सोई हुई आस्था को जगाने वाले। राजनीति के क्षेत्र में यदि महात्मा गांधी थे तो साहित्य की दुनिया में प्रेमचंद। भारतीय सामाजिक-राजनीतिक क्रांति के अग्रदूत के रूप में दोनों की स्थिति और महानता समान है। प्रेमचंद को जानकर हम गांधी को अनायास पा जाते हैं और गांदी की क्रियात्मकता में हमें प्रेमचंद के जीवन-दर्शक की झलक मिलने लगती है। साहित्य और राजनीति के क्षेत्र को अपनी प्रतिभा तथा कार्य शक्ति से स्पंदित करने वाले प्रेमचंद और गांधी किसी पाश्चात्य प्रणाली के मोहताज न रहकर इसी देश की मिट्टी से उपजी सभ्यता-संस्कृति में अपने कल्याण की सम्भावनाएं खोजने वाले पुरुष थे। गांधीजी के समान ही प्रेमचंद ने कभी भी हिन्दी और उर्दू के भेद को कबूल नहीं किया। वे तो मिली जुली भाषा का ही इस्तेमाल करते थे और उसी के हिमायती थे। गांधी और प्रेमचंद दोनों सादगी और सरलता के जीवंत प्रतीक थे। प्रेमचंद साम्राज्यवादी शक्तियों से संघर्ष करने एवं देश को पराधीनता से मुक्त कराने में गांधी के राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़े और अपनी कलम से बड़ी निष्ठा के साथ उसे सहयोग करते रहे। प्रेमचंद की यह महानता थी कि उन्होंने स्वाधीनता संग्राम को देश की निर्धन, शोषित, पीड़ित एवं वंचित जनता के साथ सम्पृक्त किया। यही वजह है कि उनका साहित्य स्वाधीनता संग्राम का ही साहित्य नहीं है, वरन् देश की त्रस्त जनता का भी साहित्य है। मार्क्स को भी प्रेमचंद ने अपने चिंतन का केंद्र यदि बनाया तो गांधी के प्रतिलोम के रूप में नहीं बल्कि उनके पूरक के रूप में। मार्क्स और गांधी दोनों का प्रभाव प्रेमचंद पर पड़ा, परन्तु गांधी उनकी मानसिकता के अधिक अनुकूल थे। भारत में गांधीवादी के, सर्वाधिक प्रतिष्ठित एवं लोकप्रिय प्रतिनिधि लेखक प्रेमचंद ही हैं। यहां पर एक साहित्यिक योद्धा था तो दूसरा राजनैतिक योद्धा। उद्देश्य दोनों का एक ही था।

संदर्भ ग्रंथ

[1] डॉ.आलोक दीपक आलेख- दिनांक 30-जुलाई-2018
[2] गांधी दर्शन – विकिपीडिया
[3] ‘सत्य के प्रयोग’ आत्मकथा गांधी
[4] “चोरी”कहानी प्रेमचंद
[5] “वरदान” उपन्यास प्रेमचंद
[6] “प्रेमा”उपन्यास प्रेमचंद
[7] “प्रतिज्ञा”उपन्यास प्रेमचंद
[8] सेवासदन”उपन्यास प्रेमचंद
[9] प्रेमाश्रम”उपन्यास प्रेमचंद
[10] “रंगभूमि”,उपन्यास प्रेमचंद
[11] कर्मभूमि”,उपन्यास प्रेमचंद
[12] प्रेमचंद घर में”...जीवनी प्रेमचंद
[13] “गोदान”,उपन्यास प्रेमचंद
[14] “हंस पत्रिका प्रेमचंद
[15] नया साहित्य : नये प्रश्न : नन्ददलारे वाजपेयी, पृ. 194
[16] नया साहित्य : नये प्रश्न : नन्ददुलारे वाजपेयी, पृ. 198
[17] विचार और अनुभूति : नगेन्द्र, पृ. 139
[18] See Indian Political Thought, Page 414 : Sharma ‘Reason is poor thing in midst of temptation, Faith that transcends reason is our only Rock of Age.’
[19] विचार और अनुभूति : नगेन्द्र, पृ. 141

*Corresponding author.
E-mail address: urmiporwal@ gmail.com